दश लक्षण धर्म

—सर्वजन हिताय ! सर्वजन सुखाय !

समीक्षक : डॉ० सतीश कुमार भार्गव

परमपूज्य आचार्यरत्न १०८ श्री देशभूषण जी महाराज क्रियाशील आचार्य हैं। वे चतुर्विध-संघ-मुनि-अर्जिका-श्रावक-श्राविका धर्म और धर्मायतनों की रक्षा के लिए अपने दायित्व को पूर्ण करने में सदा सजग रहते हैं। उनकी सजगता का प्रमाण यह है कि वे सन् १९६४ में जयपुर से पावागढ़ की यात्रा के लिए जाने वाले थे। उन्हें समाचार मिला कि तीर्थराज सम्मेद शिखर जी के विषय में बिहार सरकार और श्वेताम्बर समाज के मध्य ऐसा समझौता हुआ है, जिससे दिगम्बर समाज के अधिकार समाप्त हो गये हैं और सम्मेद शिखर जी के दर्शनों तक के लिए दिगम्बरों को श्वेताम्बरों की कृपा पर निर्भर रहना पड़ेगा। यह बात दिगम्बर समाज के धार्मिक अधिकार और स्वाभिमान के विरुद्ध थी। ऐसे समय में आचार्य देशभूषण जी ने घोषणा की कि यदि शीघ्र ही इस समझौते को रद्द न किया गया तो वे आत्मशुद्धि के लिए अनशन करेंगे। उनकी इस घोषणा से दिगम्बर समाज में जागृति की लहर फैल गई। सरकारी क्षेत्रों के अनुरोध और आश्वासनों पर महाराज को अनशन स्थगित करना पड़ा।

आचार्य महाराज सरस्वती माता के अनन्य भक्त हैं। वे अपने खाली समय का सदुपयोग साहित्य-सृजन, अध्ययन और चिंतन में ही करते हैं। उन्होंने सन् १९६५ में दिल्ली चातुर्मास में पर्युषण पर्व में जो प्रवचन दिये थे उनका संकलन 'दश लक्षण धर्म' पुस्तक में किया गया है। आचार्य महाराज ने दश लक्षण धर्म की व्याख्या अपने प्रवचनों में कथा-कहानी के माध्यम से बड़े रोचक ढंग से की है।

१. **उत्तम क्षमा धर्म**—क्षमा वीरों का आभूषण है। इसी से व्यक्ति को अमर पद मिलता है। असत्य से सत्य की ओर जाने पर अमर पद की प्राप्ति होती है। विवेकी पुरुष को क्रोध से दूर रह कर केवल शांति से काम लेना चाहिए। क्रोध पिशाच की भांति है और इसे केवल क्षमा से जीता जा सकता है।अक्रोध क्षमा का एक रूप है। क्षमा के द्वारा व्यक्ति की अपनी हानि नहीं होती बल्कि क्रुद्ध व्यक्ति का उत्तेजित मस्तिष्क शांत हो जाता है। गृहस्थ श्रावक को आवश्यकता पड़ने पर क्रोध के द्वारा अन्याय का प्रतिकार करना चाहिए। वैसे हर एक को यह याद रखना चाहिए कि मेरा अक्रोध स्वभाव है।

२. **उत्तम मार्दव धर्म**—मार्दव का अर्थ मृदुता या कोमलता है। अभिमानी मनुष्य का मन अपने अंह में इतना कठोर हो जाता है कि वह अपने समक्ष किसी को कुछ गिनता ही नहीं। अहंकार और ममकार (माया और लोभ) प्राणी के सबसे बड़े शत्रु हैं। व्यक्ति को अपनी आत्मिक उन्नति के लिए मद या अभिमान को छोड़कर अपने स्वभाव में कोमलता लानी चाहिए।

३. **उत्तम आर्जव धर्म**—आत्मा का स्वभाव सरलता है। मायाचार हमें संसार में फंसाता है किन्तु हमें यह याद रखना चाहिए कि हमें सिद्धालय पहुंचना है। दश लक्षण धर्म आत्मा की कुटिलता या मायाचार को छोड़कर उसे ऋजु पथ पर ले जाते हैं। मन, वचन, काय से एकरूपता रहने पर ही यह कुटिलता दूर हो सकती है।

४. **उत्तम सत्य धर्म**—सत्यमेव जयते अर्थात् संसार में सत्य की जय होती है। आत्मा का धर्म सत्य है और यही जैन धर्म है। महान् तीर्थंकरों ने हमेशा सत्य के अंदर मग्न होकर इसका उपयोग किया है। प्रत्येक मानव को भी यथासम्भव सत्य का व्यवहार करना चाहिए। इसी से उसे पंचेन्द्रिय सम्बन्धी सुख प्राप्त होते हैं।

५. **उत्तम शौच धर्म**—शौच धर्म आत्मा का स्वभाव है। आत्मा शुद्ध दर्शन ज्ञान चैतन्य रूप है। ऐसे निर्मल आत्मा का सम्पूर्ण पर वस्तु को मन वचन काय से त्याग कर ध्यान करना ही शौच है। व्यवहार में लोभ का त्याग करना भी इसका एक रूप है। सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र से आत्मा में शुचिता आती है। श्रावक को आत्मा मलिन करने वाले लोभ कषाय का परित्याग करना चाहिए।

६. **उत्तम संयम धर्म**—संयम दो प्रकार का होता है—इन्द्रिय संयम और प्राणी संयम। पांचों इन्द्रियों को काबू में रखना इन्द्रिय संयम कहलाता है। संयमी जीव सदा सुखी जीवन व्यतीत करता है। इसी से आत्मा की उन्नति होती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

७. **उत्तम तप धर्म**—संयम पालन करने पर ही तप किया जा सकता है। तप द्वारा कर्मों की निर्जरा होती है। प्राणी को सम्यक् तप द्वारा 'पर' से रुचि हटाकर आत्म-रुचि जाग्रत करनी चाहिए। इसी से उसका कल्याण होता है।

८. **उत्तम त्याग धर्म**—अनादि काल से यह जीव स्व को भूलकर पर-द्रव्य को ग्रहण करता रहा है। जिन वाणी को सुनने के बाद मन में त्याग की भावना प्रबल होती है। त्याग दो प्रकार का होता है—एकदेश त्याग और सर्वदेश त्याग। इनमें से पहला गृहस्थों के लिए है, दूसरा साधुओं के लिए। संसार में त्यागी महान् होता है। अतः प्राणी को त्याग धर्म का निरन्तर अभ्यास करते रहना चाहिए।

९. **उत्तम आकिंचन्य धर्म**—आकिंचन्य का अर्थ है—मैं अकिंचन हूं। पदार्थ परिग्रह नहीं है बल्कि पदार्थ में ममता परिग्रह है। हर एक को यह याद रखना चाहिए कि उसे इस संसार से जाना है। अतः उसे त्याग करते रहना चाहिए। मंदिर में नित्य दर्शन के लिए जाना, दान करना तथा गुरु भक्ति करने से मन वासनाओं से दूर हो जाता है और उसमें आकिंचन्य भावना की लौ सदा प्रज्वलित रहती है।

१०. **उत्तम ब्रह्मचर्य धर्म**—अपनी आत्मा में रमण करना ब्रह्मचर्य है। यह दो प्रकार का होता है। सम्पूर्ण कर्म की निर्जरा करके, अपने स्वरूप में लीन होकर जो सिद्ध पद प्राप्त करता है उसे ब्रह्म या सिद्ध कहते हैं। व्यवहार में स्वस्त्री और परस्त्री का त्याग करके अपने आत्मसाधन में लीन रहना ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मज्योति के झलकने से दूसरे विकारों का स्वतः दमन हो जाता है। इसके पालन से व्यक्ति निरोगी, कांतिवान्, विद्यावान् होता है तथा उसकी स्मरण शक्ति भी विकसित होती है।

उक्त दश लक्षण धर्म का पालन करने वाले व्यक्ति के मन में भगवान् के धर्म का सदा वास होता है। इससे प्रेरणा पाकर मानव स्वयं अपना ही नहीं बल्कि अन्यों का भी कल्याण करता है। पर्व की भांति नित्य ही शुद्ध आहार और जल लेने पर व्यक्ति एक ओर रोगों से मुक्त होता है और दूसरी ओर उसे पुण्य लाभ भी मिलता है। आचार्य के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को दश-लक्षण-धर्म का पालन करना चाहिए, जिससे एक ऐसे मानव-समाज का विकास हो सके, जिसमें एकता हो और सभी लोग सुखी रह सकें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org